बर्लिन (जर्मनी)
मई १४, १६६६

सन्देश संख्या ३

# मन एवं निर्मन

मन विश्वासों एवम् अविश्वासों का कूड़ा कचरा है, 'निर्मन' ही प्रत्यक्षबोध एवं समझदारी का उत्कष है।

मन समझ नहीं सकता। यह तो केवल अवधारणाओं एवम् अनुमानों का सृजन करता है।

'भावुक उत्तेजना' कभी भी 'दीप्त ऊर्जा' को प्राप्त नहीं कर सकती है। पूर्ववर्ती मन से सम्बन्धित है और परवर्ती 'निर्मन' से।

'संकल्प–स्वातंत्र्य' नाम की कोई चीज नहीं है। या तो स्वातंत्र्य (निर्मन) है या ङिगर संकल्प (मन) यानी कि बन्धन।

समर्पण 'निर्मन', 'अस्तित्व' एवम् 'समझदारी' की एक प्रक्रिया है। यह शुद्ध क्रिया है। समर्पण दीप्तिमान होता है।

परवशता मन, आकांक्षा एवम् अंधानुसरण की प्रतिक्रिया से कलुषित है। परवशता दीप्तिहीन होती है।

मन काल्पनिक दुनिया में विचरण का आदी होता है। आप ''निर्मन'' अवस्था को तब प्राप्त करते हैं जब आप मन को कल्पना की दुनिया में सैर करने का अवसर नहीं देते हैं।

मन जब तकनीकी (वास्तविक) क्षेत्र में कार्यरत होता है तब स्वस्थ होता है। कल्पना के क्षेत्र में मन रोगों एवं व्याधियों से भरा होता है।

आध्यात्मिकता कल्पना की दुनिया में उड़ान नहीं है।

ध्यान (क्रिया) युक्त जीवन एक ऐसा जीवन है जहाँ मन की आत्मकेन्द्रित गतिविधियाँ नहीं होती हैं। मानव–मन की विकृति, संकीर्णता, धूर्ततापूर्ण शोषण, कुटिल पाशविकताओं एवं मूर्खतापूर्ण कल्पनाओं के बावजूद मनुष्य ऐसा ध्यान (क्रिया) युक्त जीवन प्रतिक्षण, प्रतिदिन जी सकता है।

अनुभूति की अवस्था में होना (समाधिष्ठित सचेतनता) सर्वाधिक महत्वपूर्ण है न कि अनुभूति का विषय।